Special Issue January 2020

VIDYAWARTA®

Peer Reviewed International Refereed Research Journal

साहित्य और संस्कृति चिंतन

संपादक
प्रा.नवनाथ जगताप

सहसंपादक
डॉ.अनिल कांबळे

25) दलित साहित्य का अर्थ, परिभाषा एवं अवधारणाएँ
डॉ. सुशील उपाध्याय, नीलम देवी, हरिद्वार ||95

26) अतीत से वर्तमान तक त्रासद स्थितियों से जुझते बस्तर की गाथा : आमचो बस्तर
डॉ संजय नाईनवाड, सोलापुर (बार्शी) ||99

27) हनुमान प्रसाद पोद्दार के साहित्य में सांस्कृतिक चेतना
अनिता देवी, दिनेश चंद्र चमोला, बहादराबाद ||101

28) 'सात भाईयों के बीच चंपा' : एक विश्लेषण
प्रा. शैलजा पांडुरंग टिळे, इस्लामपुर ||104

29) नारी साहित्य
प्रा. व्ही. एच. वाघमारे, अक्कलकोट ||110

30) 'नाटक साहित्य की रंगमंचीय लोकधारा'
प्रा.डॉ. संजय व्यंकटराव जोशी, उस्मानाबाद ||112

31) भारत में सूफी संप्रदाय
डॉ. संजय धोटे, वर्धा ||114

32) शवयात्रा : दलित विमर्श
अंबादास विश्वनाथ कांबळे, सोलापुर ||117

33) हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श
स्वाती विष्णू चव्हाण, पुणे ||119

34) निर्मला पुतूल के साहित्य में आदिवासी जीवन-संघर्ष
बनगनर ज्ञानेश्वर किसन, पुणे ||121

35) हिंदी व्यंग साहित्य तथा नारी व्यंग लेखन
सौ. मानखेडकर बी. एस., चाकूर ||123

36) हिंदी साहित्य में व्यंग्य: स्वरूप और विकास
श्री. अंकुश जयवंत शेलार, सोलापुर ||125

www.vidyawarta.com/03 — http://www.printingarea.blogspot.com

30

साहित्य, समाज और संस्कृति के उपलक्ष्य में प्रस्तुत शोधालेख

'नाटक साहित्य की रंगमंचीय लोकधारा'

प्रा.डॉ. संजय व्यंकटराव जोशी
व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय, उस्मानाबाद

'भरतमुनि' के नाट्यशास्त्र की वास्तविक उत्तर अधिकारी हिन्दी रंगमंच की 'लोकधारा' ही है। भक्तिकालसे इसधारा ने अपना रुप सिंचते हुए धारा का निर्माण किया है। भक्तिकाव्य को लोक काव्य ही कहा गया है। यह हिन्दी साहित्य की 'लोकधारा' ही है। स्वाँग, भगत, माच, ख्याल, वैष्णवनाट्य, हिन्दी रंगमंच की लोकधाराएँ ही है दसवीं शती से हिन्दी भाषा और उसके उदय का काल माना जाता है। यह प्रांतिय बोलियों के उद्‌भव का काल भी है। मैथिली, ब्रजभाषा, खडीबोली, अवधी आदि के विकास का जो काल माना जाता है। वही रंगमंच की 'लोकधारा' का विकास काल भी माना जाता है।

हिन्दी नाटक 'रंगमंच' का प्राचीन इतिहास भले ही हो लेकिन विशिष्ट लोगों की कला अभिव्यक्ती के कारण रंगमंचीय अनुभूति समाज में जिवीत रही है। कुछ लोगों के कारण इसके अभिनेता आयाम आज भी जिंदा है। और विकसित भी हो रहे है वैसे इनकी चर्चा बहुत समय के विद्वान करते रहे है।

'रंगमंच' को इसधारा ने ही संभालकर रखा यह कहाजाए तो जूठ नही होगा। अभिनय के नये नये तरिके इस धारा ने दिये 'बिदोसिया' नाटक आधुनिक नाटक भले ही हो लेकिन इसमें 'लोकधारा' को जीवन्त रखने का प्रयास हुआ है। यह अद्‌भूत रंगमंचिय कार्य है। यह हिन्दी रंगमंच को 'लोकधारा' ही हिन्दी नाटक रंगमंच का वास्तविक जन्म है। आधुनिक हिन्दी रंगमंच का विकास 'लोकधारा' की परम्परा से जुडा हुआ है। 'इन्दरसभा' सन १८५२ में रचा गया यह 'रंगमंच' को मराठी साहित्य संघ वि.वा.शिरवाडकर आदि लेखक तथा संस्थाएं इस दिशा में प्रयत्नशील रही है। आधुनिक नाटकों का कार्य वैभवपूर्ण और नये प्रयोगों से संबंधित है। व्यापक इसका कार्य हो गया है। केवल प्रांतिय भाषा के समान यह सिमित नही रहा। बंगाल और कर्नाटक के बाद महाराष्ट्र में नाट्य विधा का प्रचार हुआ है।

"सन १८४३ का 'सीता स्वयंवर' नाटक आधुनिक मराठी साहित्य का पहला रंगमंचीय नाटक है। यहाँ यह विशेष रुप से स्मरण रखता है। कि 'मराठी' के इस प्रथम नाटक से ही मराठी साहित्य मे नाट्य विधा और रंगमंच का संबंध अभिन्न रुप से जुड गया है। इसी कारण सन १८४३ से आज तक प्रत्येक 'नाटक' 'रंगमंच' की दृष्टि से ही लिखा जाता रहा है।

हमारी आज की नाट्य संबंध धारणाएँ शेक्सपिअर, इब्सन शॉ आदि पश्चिमी नाटककारों के आधार पर ही बनी है। पश्चिम के नाटकों में चरित्रचित्रण, घटना वैचित्र्य आदि को महत्व दिया जाता है। हमारे देश में काव्यवादन, संगीत, वाद्य आदि को महत्व दिया जाता है। पर समकालिन नाटकारों ने पाश्चात्य धुन के प्रभाव से विभिन्न विषयों को अपने नाटकों में शामिल किया है। जिससे नाटक और रंगमंच का दायारा बदल गया है। साठोत्तरी दर्शकों में यह पध्दती खासकर देखने मिलती है।

साठोत्तरी दशकों में नाटक की दृष्टि से विचार बोध, रंगशिल्प, मंचन, भाषा आदि दृष्टि से परिवर्तन आये। समकालीन हिन्दी नाटककारों मे लक्ष्मी नारायण लाल, रमेश बक्शी, भीष्म साहनी, सुरेन्द्र वर्मा, गिरीश कर्नाड और शंकर शेष जैसे नाटककारों के नाटक रंगमंच की दृष्टि से नया रंगशिल्प, भाषा, विचारबोध लिए दिखायी देते है। 'शंकर शेष' की नाट्य कला मंचीय दृष्टि से इनके नाटक भावात्मक और क्रियाशीलता की दृष्टि से बेजोड है। जिसमें अभिनय, वेशभूषा, दृश्यबंध, संगीत, प्रकाश, मंचस्थापत्य तथा दर्शक महत्वूपर्ण है। 'रंगमंच' की परिकल्पना को इसप्रकार उपस्थित कर सकते है। नाटक को रंगमंच पर प्रस्तुत करने के बाद विभिन्न विषयों का आधार निर्देशक को लेना पडता है। जिसमें अभिनेता की भूमिका महत्वपूर्ण है। अभिनेता और नाटक के अन्य पात्रों से ही नाटक का प्रभाव निर्धारीत होता है। जिसमें अभिनेता की भूमिका महत्वूपर्ण है। अभिनेता और नाटक के अन्य पात्रों से ही नाटक का प्रभाव निर्धारीत होता है। नाटक और रंगमंच व्यापक संकल्पना है। जिसको एक नाटककार तथा निर्देशक के लिए बहुत आयाम रहते है। नाटककार के सफल नाट्य मंचन के लिए एक श्रृंखला होती है। जिसके नाटक को गुजरना पडता है।

'नाटक' हर भाषा और साहित्य का महत्वपूर्ण विषय है। नाटकों के माध्यम से मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को उजागर करने का प्रयास नाटककार करता है। और समाज के सामने उसको प्रकट करता है। ऐसा मौलिक कार्य सभी भारतीय भाषाओं के नाटकों में हुआ है। पाश्चात्य में भी नयी धुन के साथ बनाया गया ढाँचा इसी उद्देश्य के साथ प्रस्तुत होता रहता है। भारत में